हम तो गाकर मुक्त हुए

भूमिका

डॉ. कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह

गुलाबजी के काव्य उपवन में खिले हुए ताज़ातर गुलाबों का स्तवक है ---'हम तो गाकर मुक्त हुए'। इस स्तवक के गुलाब पूर्ववर्ती गुलाबों से रूप, रस, गंध आदि में भिन्न है, यदि सर्वथा भिन्न कहूँ तो अत्युक्ति नहीं।

गुलाबजी मूलतः स्वच्छंद कवि हैं। स्वच्छंदवादी शब्द का प्रयोग मैं जानबूझकर नहीं कर रहा हूँ। मेरा मत है, वाद कोई भी हो, वह काव्य और कलाओं में विकास का साधक नहीं होता। गुलाबजी उत्तर छायावाद के एक अत्यंत विशिष्ट कवि हैं। सौंदर्य उनके काव्य का प्रमुख प्रेरक भाव है। उसीके द्वारा उन्होंने अपनी काव्य-रचना के विविध उपकरणों का संघटन किया है।

छंद, भाषा, अलंकरण, बिम्ब-विधान आदि सब का एक ही लक्ष्य है --- सौंदर्य-सृष्टि, सौंदर्य-बोध, सौन्दर्यानुभूति, सौन्दर्योपभोग, सौन्दर्योपलब्धि। सौन्दर्य-सृष्टि की उद्दाम कामना से ही उनका काव्य आद्यंत परिपुष्ट है। ऐसा उत्कट सौन्दर्य-प्रेम रमणीय काव्य-सृष्टि का प्रेरक होता है. किन्तु यदि उसमें सौन्दर्योपभोग की प्रवृत्ति अधिक बलवती हो जाती है तो वह सौन्दर्य-चेतना प्रतिगामी होकर उत्तप्त वासना और अतृप्ति की मांसल वेदना की अभिव्यक्ति का माध्यम बन जाती है। मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता हो रही है, गुलाबजी की काव्य-प्रतिभा इस प्रकार की ह्रासोन्मुख सौन्दर्य-सृष्टि में नहीं रमती। इसीलिये वे 'हम तो गाकर मुक्त हुए' जैसी स्वस्थ गीत-सृष्टि कर सके हैं।

इस संग्रह के गीतों में कवि के प्रौढ़ साधना-संस्थापित जीवन का प्रच्छन्न प्रवाह और संयम है। सहज स्वच्छंद कवि के काव्य-प्रवाह की प्रखरता इन गीतों में नहीं है, इनमें व्यापक और गहन

जीवनानुभूति से उत्पन्न विवेक, आनंद, विषाद, और अवसाद का विलक्षण योग है। प्रत्येक श्रेष्ठ कवि के काव्य-विकास के इतिहास में एक ऐसा काल-खंड आता है, जब उसकी कविता अलंकरण का मोह छोड़कर बिना घुमाव-फिराव के जीवन के अनुभूत सत्य की अत्यंत तीक्ष्ण और सरल अभिव्यक्ति प्रदान करना चाहती है। प्रस्तुत संग्रह के गीत गुलाबजी की इसी प्रौढ़ मनःस्थिति के परिचायक हैं। यह परिवर्तन साधारण नहीं कहा जा सकता। यह प्रमाणित करता है कि कवि के अंतर-जीवन में कहीं कोई बड़ा परिवर्तन घटित हुआ है जिससे उसके काव्य-उपवन के शोख रंगोंवाले उन्मादक तीव्र-गंध गुलाब अब सात्विक साधना के सरोवर के श्वेत कमल जैसे प्रतीत होते हैं। कवि की भाषा में भी ऐसी तारल्ययुक्त स्पष्ट सरलता और लाघव है जो हृदय को अभिभूत कर लेता है। भाषा का यह रूप गुलाब के काव्य-विकास की अत्यंत स्वाभाविक परिणति है। काव्य-भाषा के विकास की यह स्थिति सत्कवियों में ही पायी जाती है। गोस्वामी तुलसीदास की विनय-पत्रिका के अंतिम पदों, प्रार्थनाओं की भाषा अथवा हनुमान-बाहुक की भाषा को जिन्होंने ध्यान से पढ़ा है, काव्य-भाषा के विकास के इस रहस्य को समझ लेंगे। शेक्सपीयर के अंतिम नाटकों और सॉनेटों में बड़ी तीखी एवम् व्यंजनापूर्ण सरलता है। सरलता का अर्थ सीधी-सादी कथ्यात्मक भाव-व्यंजना नहीं है, यह उसके बहुत आगे की वस्तु है।

गुलाबजी के इस संग्रह के गीतों में अनेक प्रकार के भावों का शाबल्य है। आत्मोसर्ग इस काव्य की एक प्रमुख भाव-प्रपत्ति है :

१. मेरे जीवन की बाजी अपने हाथों में ले लो

२. अब कुल राम हवाले

३. *कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड जहाँ क्षण-क्षण बनते, मिट जाते*
वहाँ एक कृमि के क्रंदन सुनने में कैसे आते!

४. *सर पर रहे हाथ बस तेरा, जग की अवहेला हो*

गोस्वामी तुलसीदास ने अपने विनयपत्रिका के पदों में प्रपत्ति

के साथ दैन्य-भाव की जैसी विह्वल व्यंजना की है, उसी श्रेणी का काव्योपयोगी दैन्य-भाव इस प्रकार के गीतों में मिलता है । यह दैन्य-भाव प्रपत्ति और भक्ति-भावना का पोषक है ।

इस संग्रह के गीतों में अन्य उल्लेखनीय भाव हैं अवसाद और निर्वेद । अवसाद, विषाद, निर्वेद संचारी भावों की कोटि में ही आते हैं । 'शम', शान्त रस का स्थायी भाव है । विषाद या अवसाद जब व्यक्तिबद्ध होता है तो उसे काव्योपयुक्त बनाना कठिन होता है । किन्तु गुलाबजी ने अपने विषाद को साधारणीकृत कर इन गीतों में प्रस्तुत किया है । इसलिए वे 'शम' के पोषक होकर सानुगुण बन गये हैं । इस प्रकार के विषाद-जन्य निर्वेद का सुन्दर उदाहरण है यह गीत ---

कुछ भी बदले में नहीं लेना है
देना है, देना है, देना है

* * *

दाता का हाथ नहीं रुकता है
देता सतत काल को चबेना है

यह तत्व-ज्ञान-जन्य निर्वेद का सुन्दर उदाहरण है ।

प्रेम करके हम तो पछताये
सारी आयु रहे चातक-से नभ पर आँख गड़ाये !
जी करता है, एक बार ही कोई गले लगाये !

इस गीत में शब्दों और प्रतीकों का प्रयोग बड़ा सार्थक है । मनस्तापजन्य ग्लानि का बड़ा प्रभावी रूप इन पंक्तियों में प्रस्तुत किया गया है ।

पर उन स्मित नयनों के आगे कोई काम न आये
मन की बात रही मन में ही, कभी न मुँह पर लाये

इस प्रकार के गीत शुद्ध लौकिक प्रेम के विह्वलता के व्यंजक हैं । ऐसे कुछ गीत, भक्ति-प्रधान गीतों के अपने आर्जव और आत्मस्वीकृति के कारण अधिक मर्मस्पर्शी हैं । निर्वेद और भक्ति-भावना से परिपूर्ण यह गीत हृदय को झकझोर देता है ---

जिस क्षण चलने की वेला हो,
गति को रोके हुए न शत-शत स्मृतियों का मेला हो

आसन्न मृत्यु की विभीषिका का बड़ा कमनीय रूपांतरण और परिष्करण इस गीत में किया गया है।

'जिस दिन नीरव होगी वीणा' भी ऐसा ही एक मार्मिक गीत है।

कवि का विषाद संचारी भाव है। वह व्यंजक है, व्यंग्य नहीं। इसलिए वह एक विशुद्ध भावभूमि का निर्माण करता है। छोटी-छोटी अनुभूतियों को एक में गुम्फित कर गेय बना देने की कला में गुलाबजी सिद्धहस्त हैं। गुलाबजी ने अपने इस ग्रन्थ में यह काव्यपथ चुना है पर उनका कोई गीत माधुर्यभाव से रिक्त नहीं है। व्यक्तिगत विषाद के भार से जो गीत जितना मुक्त है, वह उतना ही सरस और रमणीय बन पड़ा है। इसलिए वे स्वस्थ वैराग्यभावना के पोषक बन गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है, कवि के हृदय में शान्ति प्राप्त करने के लिए उत्कट तड़पन है और वही इन गीतों में इतनी द्रावक बन गयी है। इस वेदना से बढ़कर इसका अन्य श्रेष्ठतर उपजीव्य क्या हो सकता था!

गुलाबजी की कृति उच्च स्थान की अधिकारिणी है, इसने समसामयिक हिन्दी-साहित्य को शाश्वत भाव-विभूति प्रदान की है। वे विदेशों में भी हिन्दी-काव्य की गौरव-वृद्धि कर रहे हैं।

मुझे विश्वास है, उनकी यह रचना वहाँ और जीवंत और उच्चतर भावनालोक के साक्षात्कार में सहायक होगी।

गुरु पूर्णिमा ११-७-८७ डॉ. कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह